बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 110

स्वर्ण खरीद की होड़

सोना एक बार फिर चर्चा में है। दुनियाभर में केंद्रीय बैंकों द्वारा की जा रही खरीद के कारण इसकी कीमतें पांच वर्ष के उच्चतम स्तर पर पहुंच गई हैं। पांच वर्ष पहले सन 2013 में अमेरिकी केंद्रीय बैंक फेडरल रिजर्व द्वारा की जा रही कटौती के चलते सोने की कीमतें 1,500 डॉलर प्रति औंस से घटकर 2015 में 1,072 डॉलर प्रति औंस रह गई थीं। हालांकि बाद में स्थिति में कुछ सुधार हुआ था। सन 2019 में कीमतें डॉलर के हिसाब से 10 फीसदी बढ़ीं और यह 1,407 डॉलर प्रति औंस हो गईं। जब भी भरोसे का संकट हो, निवेशक सोने में निवेश करना उचित समझते हैं। सोने की कीमतों में हालिया तेजी की जड़ें अमेरिका और चीन के बीच छिड़े व्यापार युद्ध में हैं। अमेरिका-ईरान के बीच के तनाव ने भी इसे बल दिया है।

रूस, चीन और भारत के केंद्रीय बैंकों ने 2018 में भी और इस वर्ष भी काफी सोना खरीदा। कजाकस्तान और तुर्की के केंद्रीय बैंकों ने भी अपना स्वर्ण भंडार बढ़ाया। वेस्ट गोल्ड काउंसिल के मुताबिक 2018 में केंद्रीय बैंकों की सोने की मांग 651 टन के साथ कई दशकों के उच्चतम स्तर पर पहुंच गई। यह 2017 के मुकाबले 74 फीसदी अधिक थी। सन 1971 में ब्रेटन वुड व्यवस्था के भंग होने के बाद यह उच्चतम स्तर था। 613 टन के स्वर्ण भंडार के साथ आरबीआई इस मामले में 10वां सबसे बड़ा भंडार वाला केंद्रीय बैंक है।

अमेरिका और चीन के बीच की कारोबारी जंग ने दुनिया भर में अनिश्चितता पैदा की है। अगर ये दोनों किसी समझौते पर नहीं पहुंचते तो वित्तीय बाजार में बहुत बुरी हलचल मच सकती है। अप्रैल 2019 तक चीन के पास अमेरिकी सरकार की 1.1 लाख करोड़ डॉलर मूल्य की प्रतिभूति थी। अगर यह इसका कुछ हिस्सा बेचना चाहे तो अमेरिकी डॉलर औंधे मुंह गिर सकता है। डॉलर में परिसंपत्ति रखने वाले किसी भी केंद्रीय बैंक के लिए यह अच्छी खबर नहीं होगी। भारत के 400 अरब डॉलर से अधिक के भंडार में 155.3 अरब डॉलर अमेरिकी बॉन्ड में है जबकि पूरी दुनिया में यह 6.4 लाख करोड़ डॉलर है। जाहिर है काफी कुछ दांव पर लगा है।

सवाल यह भी है पिछले वर्षों में सोने से दूरी बनाए रखने वाले केंद्रीय बैंकों के लिए सोना दोबारा महत्त्वपूर्ण क्यों हो गया? इसका उत्तर आसान है। दरअसल कोई अन्य विकल्प नजर नहीं आ रहा। चीन दुनिया की दूसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है और बहुत संभव है कि 2030 के आरंभ में वह अमेरिका को बेदखल कर सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन जाए। परंतु डॉलर के उलट युआन एक नियंत्रित मुद्रा है। इसमें दो राय नहीं कि अमेरिका के पास फिलहाल सबसे बड़ा हथियार डॉलर या कहें पेट्रो डॉलर है। दुनिया जीवाश्म ईंधन पर चल रही है और उसे खरीदने के लिए डॉलर आवश्यक है। पेट्रो डॉलर ने करीब 50 वर्ष तक वैश्विक व्यवस्था को संभाला। संभव है कि वह एक दो दशक तक और ऐसा करता रहे लेकिन विकल्प बहुत तेजी से उभर रहे हैं। भारत स्वयं 2030 तक पूरी तरह इलेक्ट्रिक वाहनों की नीति अपना रहा है। इससे तेल आयात घटेगा। दूसरी ओर, बैटरी बनाने के लिए संसाधन की जरूरतों के चलते उसकी निर्भरता चीन पर बढ़ेगी।

विविधता लाने के अलावा भी इसके ऐसे कारण हैं जिन्हें समझा जा सकता है। आर्थिक हथियार के रूप में डॉलर की धार भोथरी करना भी एक वजह हो सकती है। रूस और चीन ने बिक्री के लिए उपलब्ध सोने में से सबसे अधिक मात्रा में सोने की खरीद की है। डॉनल्ड ट्रंप अमेरिका आने वाली हर बाहरी वस्तु पर जिस तरह कर लगा रहे हैं उसने दुनिया के देशों को डॉलर केंद्रित व्यवस्था से दूरी बनाने पर मजबूर किया है। ऐसे परिदृश्य में निकट भविष्य में सोना मजबूत बना रह सकता है।

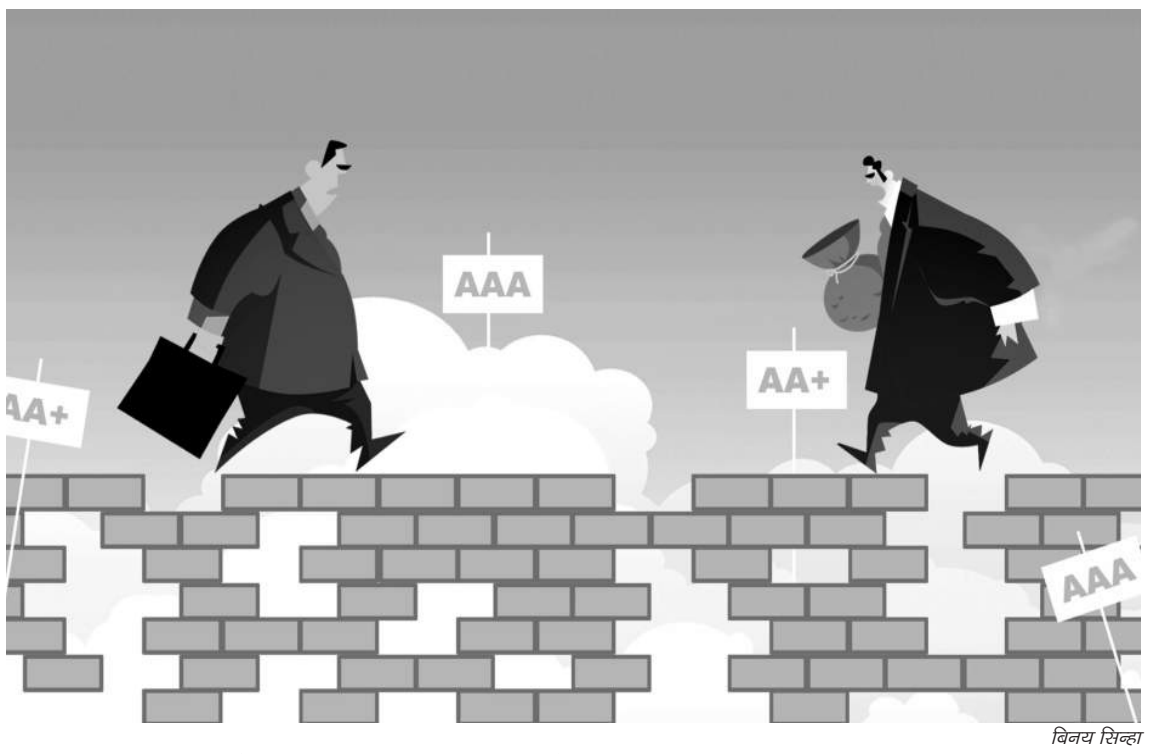

बिनय सिन्हा

एनबीएफसी संकट भरोसे का प्रश्न

अगर निवेशकों को एनबीएफसी की ओर वापस लाना है तो वित्तीय तंत्र और उसकी मजबूती को लेकर भरोसा बहाल करना होगा। इस संबंध में विस्तार से जानकारी दे रहे हैं **आकाश प्रकाश**

गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (एनबीएफसी) का संकट बरकरार रहने और हालात के बद से बदतर होते जाने को लेकर पर्यवेक्षक काफी हद तक चकित हैं। एनबीएफसी और एचएफसी (हाउसिंग फाइनैंस कंपनी) के शेयर आईएलऐंडएफएस डिफॉल्ट के पहले बाजार के प्रिय थे। इन शेयरों के दाम में बहुत तेजी से इजाफा हुआ, ये मुनाफे में रहे और ऋण बाजार में गहराई का भी इन्हें लाभ मिला। एक वक्त तंत्र में होने वाली ऋण वृद्धि के 25 फीसदी के लिए ये उत्तरदायी थे। इन शेयरों को खूब लाभ पहुंचा और ये निजी बैंकों के तर्ज पर मूल्यवर्धन करते हुए आगे बढ़े।

अगर सितंबर 2018 के पहले ये शेयर इतनी बेहतर स्थिति में थे तो अब कोई उन्हें खरीदना क्यों नहीं चाहता? जबकि अधिकांश शेयरों की कीमत 50 से 75 फीसदी तक गिर चुकी है। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि निवेशकों का भरोसा पूरी तरह हिल चुका है। सार्वजनिक बाजार में निवेश करने वालों की पहुंच इन वित्तीय कंपनियों के बहीखातों तक नहीं है। चूंकि वे स्वयं ऋणपुस्तिका नहीं देख सकते इसलिए उन्हें परिसंपत्ति गुणवत्ता, संचालन आदि की जानकारी के लिए बाहरी एजेंसियों पर भरोसा करना पड़ता है। विश्वसनीयता का संकट यहीं आरंभ हुआ।

आईएलऐंडएफएस संकट के बाद रेटिंग एजेंसियों की विश्वसनीयता समाप्त हो चुकी है। इतने अधिक कर्जवाली और जटिल ढांचे की कंपनी को लंबे समय तक एएए या एए प्लस रेटिंग कैसे दी जाती रही? देनदारी में चूक के बाद ही उसकी रेटिंग कम की गई। ऐसी रेटिंग किस आधार पर दी गई? इन रेटिंग की निगरानी का क्या? बाद में अन्य बड़ी और बेहतर रेटिंग वाली एनबीएफसी को निवेश लायक न होने या डिफॉल्ट रेटिंग मिलने से विश्वसनीयता को और क्षति पहुंची। जिन संस्थानों की ग्रेडिंग कम की गई उनमें से कई के पास भारी भरकम खुदरा जमा है और खुदरा बकाया भी।

सार्वजनिक बाजार में निवेश करने वाले फिलहाल इन एजेंसियों की रेटिंग को गंभीरता से नहीं ले रहे क्योंकि इनमें कभी भी गिरावट आ सकती है। कई संस्थान बेहतर रेटिंग के बावजूद अल्पावधि में नकदी संकट का सामना कर रहे हैं। वे भी भरोसा गंवा चुके हैं। सामान्य माहौल में उनकी पहुंच नकदी तक होनी थी। हां, परिसंपत्ति जवाबदेही में विसंगति है लेकिन हर किसी के साथ समस्या नहीं है। रेटिंग में भरोसा न होने के कारण नकदी की तंगी हो रही है।

देश के शीर्ष अंकेक्षकों के साथ भी ऐसा ही मसला है। ये चारों किसी न किसी विवाद में पड़ते रहते हैं। अगर मैं गलत नहीं हूं तो संभव है आने वाले वर्षों में इनमें से किसी को किसी वाणिज्यिक बैंक के अंकेक्षण का काम न करने दिया जाए। आईएलऐंडएफएस के अंकेक्षण में भी गंभीर अनियमितता नजर आ रही है। अगर आप इन अंकेक्षकों की क्षमता पर यकीन नहीं कर सकते तो आप उनके दिए नतीजों पर कैसे यकीन करेंगे? अगर आप लेखा पर यकीन नहीं करते तो आप वास्तविक परिसंपत्ति गुणवत्ता या मुनाफे पर कैसे यकीन करेंगे? उन अंकेक्षण कंपनियों को लेकर भी सावधान रहना होगा जो वर्षों के बाद अचानक किसी कंपनी के अंकेक्षण का काम छोड़ देती हैं। वे एक दिन में काम छोड़ सकती हैं लेकिन कंपनी के अंशधारकों का क्या?

वित्तीय तंत्र की रखवाली करने वाली रेटिंग एजेंसियां और अंकेक्षक दोनों संदेह के घेरे में हैं। अगर इनमें भरोसा नहीं जन्मा तो निवेशकों को एनबीएफसी और एचएफसी की परिसंपत्ति के बहीखाते देखने होंगे और खुद ही निष्कर्ष निकालना होगा। सार्वजनिक निवेशकों की पहुंच इन तक नहीं होती। हमें सार्वजनिक तौर पर उपलब्ध सूचनाओं के सहारे रहना होगा। अतीत में जब भरोसे की कमी नहीं थी तब हम इस सार्वजनिक सूचना पर यकीन कर लेते थे और निवेश संबंधी निर्णय लिया करते थे। रेटिंग एजेंसियों और अंकेक्षकों पर भरोसा होने के कारण दोबारा जांच परख की आवश्यकता ही नहीं थी। आज मामला अलग है। कतिपय एनबीएफसी को लेकर अफवाहों का बाजार गर्म है इससे भय और आशंका का माहौल है। शांत होकर विचार करना और इन कंपनियों में निवेश करना बहुत मुश्किल है क्योंकि इनके बारे में सटीक जानकारी उपलब्ध नहीं है।

इससे निपटने का एक ही तरीका है कि निजी इक्विटी बढ़ाई जाए। निजी इक्विटी वाले बही खातों तक पहुंच की मांग कर सकते हैं और उचित सतर्कता बरतते हैं। उनमें यह क्षमता है कि आंकड़ों की विस्तृत परख कर सकें। अगर एक विश्वसनीय निजी निवेशक इन संकटग्रस्त एनबीएफसी या एचएफसी में से किसी में निवेश करना चाहेगा तो इससे विश्वसनीयता में तत्काल इजाफा होगा तथा और निवेशक भी आएंगे। निवेश से भरोसा बढ़ेगा। पुनर्पूंजीकरण से वृद्धि पूंजी बढ़ेगी और नकदी तक पहुंच भी आसान होगी।

दूसरा विकल्प यह है कि नियामक इन संकटग्रस्त वित्तीय संस्थानों के बहीखातों की जांच करें। तनाव के मानकों का इस्तेमाल करके परिसंपत्ति की गुणवत्ता का खुलासा करें।

अगर नियामकीय इजाजत से स्ट्रेस टेस्ट किया जाता है तो इससे निवेशकों में भरोसा पैदा होगा और वे समझ पाएंगे कि इन एनबीएफसी और एचएफसी में से अधिकांश की वास्तविक स्थिति कैसी है। इससे उन्हें निवेश संबंधी निर्णय लेने में आसानी होगी और वे कड़े विश्लेषण के बाद बिना भय के निर्णय ले पाएंगे।

इस क्षेत्र को लेकर काफी अटकलबाजी चल रही है। हर रोज किसी न किसी संस्थान के संकटग्रस्त होने को लेकर अफवाह सामने आती है। लोग इस बात को लेकर चिंतित हैं कि इन कंपनियों में निवेश किया जाए या नहीं। कई के लिए रोजगार की चिंता उत्पन्न हो गई है। इस क्षेत्र में नकदी का संकट था जो अब दिवालिया संकट में बदल रहा है। इन अटकलों को खत्म करने का एक मात्र जरिया यह है कि संकटग्रस्त संस्थानों की परिसंपत्ति गुणवत्ता पर स्ट्रेस टेस्ट किया जाए। इससे अटकलों का बाजार खत्म होगा और उन चुनिंदा संस्थानों की पहुंच पूंजी तक बनेगी जिनको बाजार अविश्वास के इस माहौल के कारण बिना वजह दंडित कर रहा है।

एनबीएफसी और एचएफसी कंपनियों पर दबाव बनाया जा रहा है कि वे अच्छी खुदरा परिसंपत्तियों की बिक्री करके पुनर्भुगतान सुनिश्चित करें। कई कंपनियां आठ महीने से नकदी की कमी से जूझ रही हैं। उन्होंने ऋण देना पूरी तरह बंद कर दिया है जिसका अर्थव्यवस्था पर अनिवार्य रूप से असर पड़ रहा है। ज्यादातर कंपनियों को दोबारा पूंजी की आवश्यकता होगी। ऐसा तभी हो सकता है जब व्यवस्था और उसकी निगरानी करने वालों में यकीन बहाल हो जाए।

गलती करने वालों के साथ अच्छे लोग दंडित न हों

बाअदब
सोमशेखर सुंदरेशन

'अशुरंस इंडस्ट्री' संकट में है। इस स्तंभ में इस जुमले का इस्तेमाल हम सनदी लेखाकारों और अंकेक्षकों के पेशे और साथ ही साथ क्रेडिट रेटिंग की गतिविधियों के लिए करेंगे। ये सभी इन दिनों भरोसे के संकट से जूझ रहे हैं। इसमें चौंकाने वाली बात नहीं है। खासतौर पर इसलिए क्योंकि व्यवस्थागत रूप से महत्त्वपूर्ण वित्तीय संस्थान दबाव में हैं। नियामकों ने बिना सोचे समझे जो कदम उठाए हैं उनके चलते भी ये संस्थान प्रभावित हुए हैं और निवेशकों का विश्वास एकदम निचले स्तर पर है।

यह नियामकीय व्यवस्था के लिए भी बहुत ही संवेदनशील और नाजुक मोड़ है। कॉर्पोरेट और कारोबारी जगत में किसी भी तरह की भूमिका वाले हर व्यक्ति का इस उद्योग के अच्छा या बुरा होने के बारे में अपना नजरिया है। हालात से निपटने के लिए ऐसे कौशल संपन्न लोगों की आवश्यकता है जो शांतिपूर्ण ढंग से हालात से निपटने में सक्षम हों।

हालात से निपटने के लिए जंगी तौर तरीके अपनाने की आवश्यकता नहीं है। जंग महंगी होती है और उसके साथ यह भावना स्वाभाविक रूप से आती है कि मुहब्बत और जंग में सब जायज होता है। यहां मुहब्बत समाज के संरक्षण से होती है और नफरत उन लोगों से जो समाज विरोधी होते हैं। युद्ध के समय कोई इस बात की परवाह नहीं करता कि खुद उसे कितना नुकसान हो रहा है, कितने मासूम मारे जा रहे हैं या घायल हो रहे हैं। अगर युद्ध लोगों को पसंद हो तो लोग इस कीमत को स्वीकार कर लेते हैं। नियामक और राजनीतिक सत्ताधारी भी इंसान होते हैं और मानवीय भावनाओं से परे भी नहीं होते।

ऐसे में इस बात की काफी आशंका रहती है कि अवांछित चीजों के साथ कुछ मूल्यवान चीजें भी नष्ट हो जाएं। जब ऐसे आरोप लगते हैं कि अंकेक्षक मिलीभगत से बहीखातों में छेड़छाड़ करते हैं या फिर रेटिंग एजेंसियां धोखाधड़ी कर रही हैं तो इसके गहन और गंभीर परिणाम होना तय है। ऐसा केवल आरोपितों के खिलाफ ही नहीं बल्कि समाज के शेष तबके पर भी लागू होती है। सूचना और बाजार के समक्ष उपलब्ध सूचना की सत्यनिष्ठता अहम निर्णय लेने के लिए निर्णायक है। फिर चाहे मामला निवेश का हो, ऋण के निर्णय का, बुनियादी कारोबार या कारोबारी निर्णयों का अथवा नीतिगत निर्णयों का। ऐसे में इन एजेंसियों के खिलाफ लगाने वाले आरोपों को लेकर अतिरिक्त सावधानी और संवेदना बरतनी होगी। अगर इन आरोपों के समर्थन में ज्यादा कुछ नहीं है और ये आरोप हल्के फुल्के ढंग से लगाए जा रहे हैं तो न केवल उनको नुकसान पहुंचता है बल्कि हर उस व्यक्ति को नुकसान पहुंचता है जिसकी निर्णय प्रक्रिया उनकी सेवाओं से प्रभावित होती है।

अगर उद्योग जगत में उनके द्वारा किया गया काम अच्छी गुणवत्ता वाला नहीं है तो निर्णय प्रक्रिया की गुणवत्ता पर भी बुरा असर होगा और इसका व्यापक सामाजिक असर होगा। यही कारण है कि इस उद्योग की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण और संवेदनशील हो चुकी है। शायद यही वजह है कि ऐसी गतिविधियों के लिए लाइसेंस प्रदान करने और पंजीयन का काम अत्यंत सख्त निगरानी के बाद किया जाता है। बाजार नियामक के लिए ब्रोकिंग लाइसेंस जारी करना आसान है लेकिन क्रेडिट रेटिंग एजेंसी का लाइसेंस हासिल करना काफी मुश्किल है। अगर ऐसी एजेंसियों पर किसी तरह की गड़बड़ी करने का शक हो तो भी उन पर हमले करते समय जुबान फिसलने और नाटकीयता बरतने से बचना चाहिए।

अगर सरकार के प्रति नफरत इसी प्रकार बढ़ती गई तो सड़कों पर उतरने वाली भीड़ सरकार को ही उखाड़ फेंकना चाहेगी। यह रूमानी प्रतीत हो सकता है या कम से कम उचित तो प्रतीत हो ही सकता है। परंतु इस प्रक्रिया में भी अराजकता का सामना करना पड़ सकता है। इसी प्रकार अगर अश्युरंस क्षेत्र के लोगों के प्रति असंतोष बहुत ज्यादा हो तो इससे अफरातफरी का माहौल बन सकता है।

ऐसी नियामकीय परिस्थितियों में नियामक की भूमिका को लेकर एक विवाद उत्पन्न हो सकता है कि वह अपने लक्ष्यों तक समझदारी से कैसे पहुंचे और गलत आचरण करने वालों के खिलाफ उसकी भूमिका क्या हो? दोनों लक्ष्यों के बीच द्वंद्व उचित है और वह अहम भी है। उदाहरण के लिए अगर किसी बैंक के खिलाफ बहुत सख्त कदम उठाए जाते हैं तो बैंक में आम जनता का भरोसा समाप्त हो जाएगा। दूसरी ओर अगर किसी गलती करने वाले बैंक को आसानी से छोड़ दिया जाएगा तो ऐसा गलत आचरण करने वालों को बढ़ावा मिलेगा। इससे ऐसी आश्वस्ति पैदा होगी कि बैंक इतने बड़े हैं कि वे कभी नाकाम नहीं हो सकते।

इन दोनों लक्ष्यों के बीच का अंतर और द्वंद्व इतना तीक्ष्ण है कि ब्रिटेन ने बाकायदा एक नियामकीय डिजाइन के माध्यम से इस नियामकीय ढांचे को आचरण प्राधिकार और विवेक प्राधिकार के रूप में दो हिस्सों में बांट दिया है।

हमारे देश में अशुरंस उद्योग का नियमन इतने विशिष्ट तरीके से नहीं किया जाता है। हालांकि हकीकत में ऐसा किया जाना चाहिए। किसी गलत काम में संस्थागत या संगठनात्मक संबद्धता के बावजूद नियम ऐसे होने चाहिए कि बिना व्यक्तिगत रूप से गलती के जिम्मेदार लोगों को बचाए, संस्थान को बचाया जा सके। गलती करने वालों को कारोबार से बाहर करने से सुर्खियां तो मिलेंगी लेकिन इसका असर उतना ही तात्कालिक होगा जितना कि सुर्खियों का।

(लेखक अधिवक्ता और स्वतंत्र सलाहकार हैं। वह पेशेवर रूप से अशुरंस उद्योग का प्रतिनिधित्व करते हैं।)

कानाफूसी

भगवान भरोसे

तमिलनाडु सरकार को राज्य के इतिहास के सबसे भीषण जल संकट का भलीभांति सामना न कर पाने के कारण काफी आलोचना झेलनी पड़ रही है। ऐसे में सत्ताधारी ऑल इंडिया अन्ना द्रविड़ मुन्नेत्र कषगम ने ईश्वर की शरण में जाने का निर्णय लिया। स्थानीय प्रशासन मंत्री एस पी वेलुमणि जिन्होंने पहले कहा था कि पानी की कमी की खबर बनावटी है, वह पिछले दिनों राज्य सरकार के धर्म संबंधी विभाग द्वारा आयोजित विशेष पूजा में बैठे नजर आए। यह पूजा वर्षा के देवता को प्रसन्न करने के लिए आयोजित की गई थी। मुख्यमंत्री एडप्पी के पलनिस्वामी भी इन दिनों परेशानी का सामना कर रहे हैं। चेन्नई में अति महत्त्वपूर्ण लोगों के घर पर पानी की आपूर्ति से जुड़े सवालों का सामना कर रहे पलनिस्वामी ने यहां तक कह दिया कि वह दिन में चार लीटर पानी पीते हैं और पूरे दिन में केवल दो बाल्टी पानी का इस्तेमाल करते हैं।

छवि बनाम राजस्व

प्रदेश में राजस्व संग्रह बढ़ाने के लिए मध्य प्रदेश का आबकारी विभाग एक विचित्र प्रस्ताव सामने लाया। प्रस्तावित आबकारी नीति में सुझाव दिया गया कि प्रदेश में शराब की ऑनलाइन आपूर्ति की जाए। यानी पिज्जा या खानेपीने की चीजों को लोगों के घर तक पहुंचाने वाली वेबसाइटों की तरह शराब को लोगों के घर तक पहुंचाने का सुझाव। जानकारी के मुताबिक अधिकारियों ने इसके लिए दो कंपनियों को चिह्नित भी कर लिया था। इसके पीछे दलील यह दी जा रही थी कि इस बिक्री से उस मार्जिन की बचत होगी जो पारंपरिक बिक्री में ठेकेदारों के पास चला जाता है। जब यह प्रस्ताव राज्य के मुख्यमंत्री कमलनाथ की जानकारी में आया तो वह बेहद नाराज हुए। उन्होंने यह कहते हुए इस विचार को खारिज कर दिया कि इससे राज्य सरकार की छवि को गहरा धक्का पहुंचेगा।

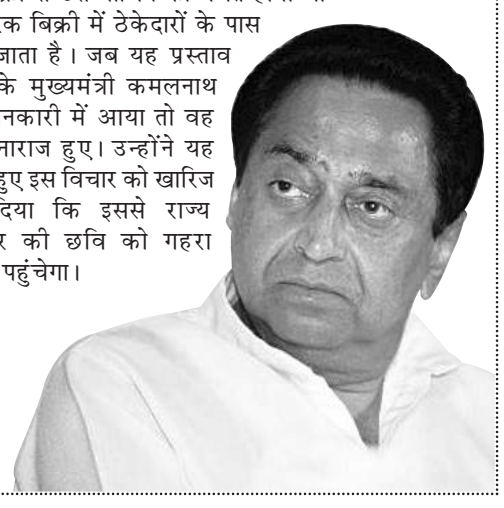

आपका पक्ष

गंभीर बीमारियों के लिए हो तत्काल राहत

बिहार में चमकी बुखार का कहर लगातार जारी है। भीषण गर्मी के बीच पारा चढ़ने के साथ ही मरीजों के मरने की भी संख्या लगातार बढ़ रही है। मुजफ्फरपुर मेडिकल कॉलेज और केजरीवाल अस्पताल में इस बीमारी से मरने वाले बच्चों की संख्या 100 से ज्यादा हो चुकी है और करीब 300 अब भी गंभीर रूप से बीमार हैं। वहीं, दूसरे छोटे अस्पतालों में या बिना इलाज के मरे बच्चों का आंकड़ा अभी उपलब्ध नहीं है। चिंताजनक बात यह है कि मरने वाले या गंभीर रूप से बीमार बच्चों में 80 फीसदी बच्चियां हैं। इस दिमागी बुखार के फैलने के लिए लीची फल को जिम्मेदार ठहराया जा रहा है। लेकिन विशेषज्ञों का मानना है कि सिर्फ लीची की वजह से यह बीमारी नहीं फैली है। इसका मुख्य कारण कुपोषण है। यह फल कुपोषित बच्चों में बीमारी के लक्षणों को बढ़ा सकता है। सरकार को लीची से ध्यान हटाकर हटकर कुपोषण से निपटने की कोशिश करनी चाहिए। साल 2014 में पूरे देश में इस बीमारी से प्रभावित 60 जिलों की पहचान की गई और यहां सघन अभियान चलाने की बात कही गई थी। इसमें पांच मंत्रालयों की एक समिति बनाई गई थी जिसमें स्वास्थ्य मंत्रालय के अलावा स्वच्छता और पेयजल मंत्रालय, सामाजिक कल्याण मंत्रालय, महिला और बाल विकास और शहरी विकास मंत्रालय भी शामिल हैं। खबरों के अनुसार समिति के गठन के बाद एक भी बैठक नहीं हुई। अब एक बार फिर स्वास्थ्य मंत्रालय ने पुराने प्रस्ताव पर काम करने की बात कही है। दरअसल राज्य और केंद्र सरकारें केवल समस्या सामने आने पर फौरी तौर पर तो कदम उठाती हैं लेकिन इसके लिए दीर्घावधि में बहुत मामूली काम होता है। सरकारों को स्वास्थ्य समस्या को लेकर गंभीर होना होगा और तत्काल कड़े कदम उठाने होंगे।

देश में कई स्थानों पर स्वास्थ्य व्यवस्था काफी बदहाल है जिसे तत्काल दुरुस्त करना होगा

मेधांश अग्रवाल, नोएडा

भीषण गर्मी का कहर

पूरे भारत में भीषण गर्मी का कहर जारी है। इस बार जून माह में ही भारत के कई हिस्सों में तापमान 50 डिग्री सेल्सियस के करीब जा रहा है। 19 मई को राजस्थान के फालोदी में तापमान 51 डिग्री तक जा पहुंचा था जो भारत के इतिहास में अब तक का सबसे ज्यादा तापमान है। इससे पहले 1956 में राजस्थान के ही अलवर में अधिकतम तापमान 50.6 डिग्री तक पहुंचा था। तेज गर्मी से जनजीवन पर बुरा असर पड़ा है। इसके चलते गरीब परिवारों के सैकड़ों लोग मौत की चपेट में आ जाते हैं। भले ही ग्लोबल वॉर्मिंग के चलते पूरे विश्व में तापमान बढ़ रहा है लेकिन पिछले 2 दशक से भारत में गर्मी की तपिश तेजी से बढ़ी है। भारत में बारिश कम होने से तापमान में होने वाली बढ़ोतरी से देश के कई हिस्सों में सूखे की स्थिति पैदा हुई है। इससे जलस्तर भी गिर रहा है और न सिर्फ पीने योग्य बल्कि सिंचाई के पानी की उपलब्धता भी लगातार घट रही है। बढ़ती गर्मी के लिए कहीं न कहीं इंसान खुद जिम्मेदार है। विकास की दौड़ में सरपट भागते इंसानों ने कार्बन उत्सर्जन, पेड़ों की कटाई, प्रकृति से खिलवाड़ करते हुए तापमान में जो बढ़ोतरी की है इसके चलते ही हर साल गर्मी और विकराल होती जा रही है। अगर हमने असंतुलित विकास की रफ्तार पर लगाम नहीं लगाई तो आने वाले दिनों में भीषण गर्मी से निजात पाना लगभग नामुमकिन हो जाएगा।

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।